शोध मंथन Vol. XIV No.II Apr.-June 2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

बौद्ध धर्म के विकास में पाल राजवंश का योगदान

प्राप्तिः 01.05.2023
स्वीकृतः 24.06.2023

33

प्रो० शशी नौटियाल
अध्यक्ष, इतिहास विभाग
जे0वी0जैन डिग्री कॉलिज
सहारनपुर (उ0प्र0)
ईमेलः *shashijvjc@gmail.com*

प्रमोद कुमार
शोधार्थी, इतिहास विभाग
जे0वी0जैन डिग्री कॉलिज
सहारनपुर (उ0प्र0)
ईमेलः *pk8449723001@gmail.com*

सारांश

छठी शताब्दी ई0पू0 का काल सामाजिक, धार्मिक जागरण एवं नवीन चेतना के विकास का काल था। गौतम बुद्ध ने तत्कालीन धार्मिक एवं सामाजिक दशा में सुधार हेतु बौद्ध धर्म का प्रवर्तन कर जनता को अध्यात्म का प्रकाश दिखाया था। बौद्ध धर्म के प्रसार एवं विस्तार में राजकीय संरक्षण ने मुख्य भूमिका निभाई। पाल राजवंश भी इसी श्रृंखला में एक ऐसा ही बौद्ध धर्मानुयायी राजवंश था। विभिन्न पाल शासकों ने बौद्ध धर्म के विकास हेतु भरसक प्रयास किए थे।

मुख्य बिन्दु

अध्यात्म, जागृति, सांस्कृतिक, नैसर्गिक, पोषक, विख्यात।

छठी शताब्दी ई0पू0 का काल सामाजिक, धार्मिक जागरण एवं नवीन चेतना के विकास का काल था। यह काल सामाजिक और धार्मिक सन्दर्भों में अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हुआ। इस जागृति का मुख्य उद्देश्य धार्मिक और सामाजिक कुरीतियों को दूर कर समाज में चेतना जागृत करना था। इस क्रान्ति ने भारत में चारो ओर विचारों की हलचल पैदा कर दी थी।

भगवान बुद्ध के जन्मकाल के लगभग भारतीय विचार–जगत् में उथल–पुथल हो रही थी। उस समय देश में, प्रमुखतः पूर्वोत्तर भारत में अनेक वाद प्रचलित थे। एक प्राचीन पालि–सूत्र में बुद्ध के आविर्भाव के समय दर्शन के ६३ वादों का उल्लेख किया गया है, जिनमें अनेक ब्राह्मण विरोधी थे। जैन ग्रन्थों मे भी अनेक वेद–विरूद्ध वादों का उल्लेख मिलता है। पालि–सूत्रों में बुद्ध के समकालीन प्रमुख वादों का उल्लेख है। इस युग के धर्म–प्रवर्तको में प्रमुख थे–गौतम बुद्ध, महावीर और मक्खलि गोसाल। इस तीनों में नैसर्गिक प्रतिस्पर्धा थी।[1]

छठी शताब्दी ई0पू0 के धार्मिक आन्दोलन का नेतृत्व भारत वर्ष में मुख्य रूप से बौद्ध धर्म के प्रवर्तक गौतम बुद्ध ने किया था। ई0पू0 छठी शताब्दी के आते–आते समाज के एक बड़े भाग में धार्मिक असन्तोष बढ़ गया था। उस समय तक ब्राह्मण धर्म अपनी पूर्व, वैदिक कालीन सरलता एवं शुद्धता का

कुछ सीमा तक परित्याग कर चुका था। इस धार्मिक असन्तोष के विभिन्न कारण थे। जो बौद्ध धर्म की उत्पत्ति में सहायक सिद्ध हुए थे। गौतम बुद्ध के जन्म के पूर्व ही भारत की सुव्यवस्थित सामाजिक परम्परा कमजोर होकर दयनीय हो गयी थी। उस समय समाज अनेक सम्प्रदायों में बटा हुआ था। "पाली साहित्य के अनुसार बुद्ध के धर्म–प्रचार के पूर्व ६२ संप्रदाय विद्यमान थे।"[2] इसी समय बौद्ध धर्म के प्रवर्तक गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था। अपने समय के नास्तिक सम्प्रदाय के आचार्यों में गौतम बुद्ध का स्थान सर्वोच्च है। "केवल उनका व्यक्तित्व ही ऐसा था, जो उनको न केवल अग्रणी बनाता था, बल्कि उनके अनुयायियों के दिलों का देवता बना देता था।"[3] गौतम बुद्ध ने चार आर्य–सत्य की व्याख्या में दुःख इन शब्दों में व्यक्त किया है–

"भिक्षुओं! 'दुःख आर्य–सत्य है।' जाति भी दुःख है, जरा भी, व्याधि भी, मरना भी, शोक–परिदेव (=रोना–पीटना)– दुःख, दौर्मनस्य, उपायस (=परेशानी) भी। जो चाहा हुआ नहीं मिलता है वह भी दुःख है।"[4]

गौतम बुद्ध प्रभावशाली व्यक्तित्व के धनी थे। उनके व्यक्तित्व से समाज का प्रत्येक व्यक्ति प्रभावित था। "पालि के धर्मसूत्रों में बुद्ध को 32 महापुरूष के लक्षणों से युक्त, एक असाधारण पुरूष के रूप में चित्रित किया गया है।"[5] बौद्ध धर्म को उत्थान काल से लेकर 12वी शताब्दी तक विभिन्न राजवंशों का संरक्षण प्राप्त हुआ था।

इतिहास के प्रकाश में समय की अनवरत धारा में बहते हुए प्राचीन राजवंशों के प्रमुख शासकों ने बौद्ध धर्म के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया था। मगध के प्रथम सम्राट बिम्बिसार, अजातशत्रु, उदयन, मौर्य सम्राट अशोक, कुषाण शासक कनिष्क व सम्राट हर्षवर्धन बौद्ध धर्म के इतिहास में महत्वपूर्ण हस्ताक्षर है। पाल राजवंश भी इस श्रृंखला की अन्तिम कडी के रूप में इतिहास में प्रसिद्ध है। सम्राट हर्षवर्धन (606 ई0–647 ई0) के पष्चात राजपूत काल के उदय की बेला में राजपूतों के नये–नये राजवंश विकसित हो रहे थे। इस नवीन स्थिति के उदय काल में बंगाल के प्रमुख शासक गौड की मृत्यु (630□□ ई0) के उपरान्त उत्पन्न लगभग एक शताब्दी □(630 ई0–750 ई0) की अराजकता को समाप्त करने हेतु "अंत में जनता (प्रकृति) ने वप्यट के पुत्र गोपाल को अपना राजा चुना (लखीमपुर–ताम्रपट्टलेख)"[6] इस प्रकार पाल वंश के संस्थापक गोपाल को जनतांत्रिक विधि से बंगाल की सत्ता प्राप्त हुई थी। बंगाल में गोपाल द्वारा स्थापित यह वंश इतिहास में पाल वंश के नाम से प्रसिद्ध है। इस वंश के शासक बौद्ध धर्म के अनुयायी एवं पोषक थे। इन्हें अभिलेखों में परमसौगात (बौद्ध) कहा गया है। प्रथम पाल शासक गोपाल (750 ई0 – 770 ई0) की प्रशासनिक उपलब्धि बंगाल में अराजकता एवं अशान्ति की समाप्ति के रूप में विख्यात है। इसके साथ ही उसकी सांस्कृतिक उपलब्धि भी इतिहास में अंकित है। पाल नरेश गोपाल बौद्ध धर्मावलम्बी था। उसने इसके विकास हेतु निर्माण कार्य कराये थे और अपने द्वारा बसाये औदन्तपुर को बौद्ध धर्म के केन्द्र के रूप में बनाने का सफल प्रयास किया था। "तिब्बती लामा तारानाथ के अनुसार गोपाल ने ओदन्तपुर (बिहार का वर्तमान नगर, पटना जिले में, राजगिर और नालन्दा के समीप) के विख्यात विहार का निर्माण कराया और ४५ वर्ष राज्य किया।"[7] औदन्तपुर का महाविद्यालय शिक्षा व बौद्ध धर्म का केन्द्र भी रहा था, यहाँ पर शिक्षा ग्रहण करने वाले शिक्षार्थियों की संख्या लगभग एक हजार थी। इस महाविद्यालय के मुख्य विद्यार्थी दिपांकर श्रीज्ञान ने बौद्ध धर्म का प्रचार भारत से बाहर भी किया था।

तिब्बती अभिलेखों के अनुसार दीपांकर श्रीज्ञान (980–1053 ई0) के नाम से संबद्ध होने के कारण विक्रमशिला की कीर्ति थी। ओदंतपुरी में अपना अध्ययन पूरा करके यह विद्वान आचार्य 1034–38 ईसवी में विक्रमशिला विश्वविद्यालय के मुख्य बने। बाद में तिब्बत के राजा के निमंत्रण पर वे तिब्बत में गए और बौद्ध धर्म के सुधार का आंदोलन उन्होंने शुरू किया।[8]

770 ई0 में अपने पिता गोपाल की मृत्यु के पश्चात धर्मपाल (770 ई0–810 ई0) बंगाल का शासक बना था। इसने अपनी सैनिक शक्ति के बल पर अपने राज्य की सीमा पूर्व में बंगाल की खाड़ी से उत्तर में दिल्ली और जालंधर तक एवं दक्षिण में विन्ध्यपर्वत तक विस्तृत की थी। धर्मपाल ने पाल–प्रतिहार राष्ट्रकूट त्रिपक्षीय संघर्ष में अपने राज्य की सीमाओं की रक्षा करते हुए कुशल प्रशासक होने का परिचय दिया था। इसने अपनी प्रजा से कर वसूलते समय समानता व न्यायप्रियता का आदर्श स्थापित किया था। पाल शासक धर्मपाल प्रशासनिक उपलब्धियों के साथ ही सांस्कृतिक उपलब्धियों के लिए भी विख्यात है। "एक लेख में धर्मपाल को 'परमसौगात' लिखा गया है। धर्मपाल ने ही विक्रमशिला के महाविहार की स्थापना की, जो आगे चलकर नालंदा के समान ही शिक्षा और बौद्ध–ध र्म का प्रसिद्ध केन्द्र बन गया।"[9] पाल शासक धर्मपाल विद्यानुरागी व निर्माता भी था। विक्रमशिला विश्वविद्यालय नालन्दा के समतुल्य विश्वविख्यात शिक्षा केन्द्र था। यहाँ पर देश–विदेश के विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते थे। बौद्ध विद्वान अतिश विक्रमशिला से ही सम्बन्धित थे। जो तिब्बत में अत्यन्त प्रसिद्ध थे। विक्रमशिला महाविहार में 100 शिक्षक थे। इसका प्रबन्ध 6 सदस्यों की समिति द्वारा चलाया जाता था। नालन्दा एवं विक्रमशिला महाविहारों में बडी संख्या में विदेशों से विशेष तौर पर तिब्बत से विद्वान बौद्ध शिक्षा ग्रहण करने आते थे। इन्हीं बौद्ध भिक्षुओं ने शिक्षा प्राप्त कर अपने देशों में बौद्ध धर्म का प्रसार किया।

810 ई0 में पाल राजा धर्मपाल के पष्चात राष्ट्रकूट वंशीय रानी रन्नादेवी से उत्पन्न उसका पुत्र देवपाल (810 ई0–850 ई0) शासक बना था। देवपाल पाल वंश का सर्वाधिक शक्तिशाली तथा प्रतापी शासक हुआ था। इसने अपने पिता धर्मपाल के समान ही परमभट्टारक–परमेश्वर महाराजाधिराज जैसी गौरवशाली उपाधियाँ धारण की थी। उसकी विजयों के परिणामस्वरूप पाल साम्राज्य उत्कृषटता की पराकाष्ठा की सीमा को प्राप्त हो गया था। देवपाल का प्रभाव अपने समय में प्राग्ज्योतिष (असम), उत्कल (उड़ीसा) तथा सुदूर दक्षिण में स्थापित हो गया था। पाल राजा देवपाल की सैनिक उपलब्धियों के अलावा सांस्कृतिक उपलब्धियाँ भी इतिहास में अंकित है। "देवपाल बौद्ध धर्मावलम्बी था। उसने भी पिता की तरह 'परमसौगात' की पद्वी धारण की।"[10] पाल शासक देवपाल बौद्ध धर्म का महान आश्रयदाता था। उसने बौद्ध धर्म के विकास हेतु अनेक महत्वपूर्ण कार्य किए थे। देवपाल का नालन्दा ताम्रपत्र अभिलेख उसके द्वारा बौद्ध धर्म के विकास हेतु किए गए कार्य की अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति का वर्णन करता है–

श्री विजय राज्य के शैलेन्द्रवंशी राजा बालपुत्रदेव द्वारा निर्मित नालन्दा के इस विहार के लिए पाँच ग्रामों के दान का उल्लेख इस दानपत्र में मिलता है। यह ग्राम–दान जावा के दूत के आग्रह पर किया गया था, जिससे इस विहार में रहने वाले भिक्षुओं के लिए भोजन, वस्त्र तथा औषधि की व्यवस्था समुचित रीति से हो सके। यह दानपत्र पाल राजा द्वारा मुंगेर के जयस्कन्धावार (सैनिक शिविर) से भेजा गया था।[11]

पाल राजवंश में उतरोत्तर काल में विग्रहपाल द्वितीय के पश्चात महीपाल प्रथम (988 ई0–1038 ई0) शासक बना था। इसके समय में पाल राजवंश की प्रतिष्ठा पुनः स्थापित हई थी। इतिहास में इसे पाल वंश का द्वितीय संस्थापक माना जाता है। पाल शासक महीपाल प्रथम ने अपनी सैनिक उपलब्धियों द्वारा पाल साम्राज्य का उत्तरी एवं पूर्वी बंगाल में पुनः अधिकार स्थापित किया था। पाल राजा महीपाल प्रथम ने अपनी सांस्कृतिक उपलब्धियों मे बौद्ध धर्म के विकासार्थ अनेक उल्लेखनीय कार्य किए थे। बौद्ध धर्म, शिक्षा के केन्द्र नालन्दा से महीपाल प्रथम का उदारता पूर्ण सम्बन्ध ा था। "नालन्दा से उसका घनिष्ट सम्बन्ध का ज्ञान 'अष्टसाहस्त्रिका प्रज्ञापारमिता' नामक बौद्ध ग्रन्थ की पाण्डुलिपि से भी होता है।"[12] उसके शासनकाल में गौतम बुद्ध की ज्ञान प्राप्ति स्थली बौद्ध गया का भी बुद्ध मन्दिर के रूप में विकास हुआ था। "महीपाल के शासनकाल के ग्यारहवें वर्ष बुद्ध की एक प्रतिमा बौद्ध गया में महाबोधि मन्दिर में समर्पित की गयी।"[13] पाल शासक महीपाल प्रथम ने बौद्ध धर्म प्रचार का भारत राष्ट्र से बाहर भी कराया था। "महीपाल ने दीपंकर श्रीज्ञान (अतिशा) नामक बौद्ध भिक्षु के नेतृत्व में एक बौद्ध प्रचार मण्डल तिब्बत भेजा।"[14] इस प्रकार बौद्ध धर्म के विकास में पाल शासक महीपाल प्रथम का योगदान सराहनीय है।

पाल राजवंशीय अन्य शासको नयपाल (1038 ई0– 1055 ई0) व रामपाल (1077 ई0–1120 ई0) ने भी बौद्ध धर्म के विकास मे योगदान दिया था "नयपाल भी प्रायः बौद्ध शासक था। उसने भी सम्भवतः वज्रासन व विक्रमशील को संरक्षण प्रदान किया तथा दीपंकर श्रीज्ञान, जेतारि व ज्ञानश्रीमित्र आदि बौद्ध आचार्य उसके समकालीन थे।"[15] पाल शासक रामपाल ने निर्माण कार्य द्वारा भी बौद्ध धर्म के विकास को गति प्रदान की थी। "रामपाल के शासनकाल में ही जगद्दल महाविहार स्थापित हुआ।"[16]

उत्तर भारत में सर्वोच्चता स्थापित करने हेतु तीन शक्तियों (पाल, प्रतिहार व राष्ट्रकूट) के मध्य संघर्ष में पाल राजवंश का सबसे लम्बा शासनकाल रहा था। पाल शासकों को दीर्घकालीन शासन करने का अवसर मिला। इस काल में इन्होने बौद्ध धर्म को संरक्षण प्रदान कर इसके विकास हेतु विभिन्न तरीकों से योगदान प्रदान किया था। पाल शासकों ने बौद्ध धर्म को अनुदान देकर व निर्माण आदि अन्य कार्यों द्वारा इस धर्म के विकास की गति को बढाया था। पाल नरेश बौद्ध धर्म को संरक्षण देते थे और वे अभिलेखों में परमसौगात (बौद्ध) कहलाये बौद्ध धर्म के विकास के लिए पाल शासकों ने भरसक प्रयास किए थे, जिसके परिणाम स्वरूप यह धर्म विश्व मंच पर और दृढ़ता के साथ विकसित हुआ था। पाल शासक बौद्ध धर्म के बडे अनुयायी थे और यह धर्म तान्त्रिक रूप से इन्हीं के संरक्षण में चमका तथा बौद्ध धर्म को जीवन की नवीनता मिली थी । अतः बौद्ध धर्म के विकास में पाल राजवंश का योगदान महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

सन्दर्भ

1. सिंह, मदन मोहन. (1972). बुद्धकालीन समाज और धर्म. हिन्दी ग्रन्थ अकादमीः पटना. पृष्ठ **98.**
2. दत्त, नलिनाक्ष., वाजपेयी, कृष्णदत्त. (1956). उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म का विकासः प्रकाशन ब्यूरो उत्तर प्रदेश सरकारः लखनऊ. प्रथम संस्करण. पृष्ठ **18.**
3. आम्बेडकर, बी0आर0. (2016) द बुद्धा एण्ड हिज धम्मा (1957). हिन्दी अनुवाद–भदन्त आनंद कौसल्यायन–बुद्ध और उनका धम्मः बुद्धम् पब्लिशर्सः जयपुर. पृष्ठ **460.**

4. (1954). संयुक्त–निकायः 54.2.1. हिन्दी अनुवाद. भिक्षु जगदीश काश्यप. भिक्षु धर्म रक्षित. महाबोधि सभाः सारनाथ. पृ0–807
5. सिंह, उपिन्दर. (2008). ए हिस्ट्री ऑफ एन्सिएण्ट एण्ड अर्ली मेडीवल इण्डिया. हिन्दी अनुवाद–हितेन्द्र अनुपम. (2018). प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहासः पियर्सन इंडिया एजुकेशन सर्विसेज प्रा0लि0ः नोएडा. पृष्ठ **322.**
6. मुखर्जी, राधाकुमुद. (2015). प्राचीन भारत. राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0ः नई दिल्ली. पृष्ठ **125.**
7. त्रिपाठी, रमाशंकर. (1998). प्राचीन भारत का इतिहास. मोतीलाल बनारसीदासः दिल्ली. पृष्ठ **255.**
8. बापट, पी0वी0. (2010). बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष. प्रकाशन विभाग. सूचना और प्रसारण मंत्रालयः भारत सरकार, सूचना भवन, नई दिल्ली. पृष्ठ **123.**
9. विद्यालंकार, सत्यकेतु. (2016). भारतीय इतिहास का पूर्व–मध्य युगः श्री सरस्वती सदनः नई दिल्ली. पृष्ठ **87.**
10. प्रजापत, पप्पू सिंह. (2018). प्राचीन भारतः नवीन सर्वेक्षण. रॉयल पब्लिकेशनः जोधपुर. पृष्ठ **443.**
11. भार्गव, पीयूष. (1996). पाल शासकों के राजत्वकाल में बौद्ध धर्म एवं बौद्ध कला. भारत बुक सेण्टरः 17, अशोक मार्ग, लखनऊ. पृष्ठ **59.**
12. प्रजापत, पप्पू सिंह. पूर्वोद्धत. पृष्ठ **444.**
13. भार्गव, पीयूष. पूर्वोद्धत. पृष्ठ **61.**
14. प्रजापत, पप्पू सिंह. पूर्वोद्धत. पृष्ठ **445.**
15. भार्गव, पीयूष. पूर्वोद्धत. पृष्ठ **62.**
16. उपरोक्त।